श्री रघुतिलका तीर्थ श्रीपदंगलवरू स्वामीजी

बनाम

मैसूर राज्य व अन्य

मुख्य न्यायाधिपति वीपी सिन्हा, न्यायाधिपतिगण पीवी गजेन्द्रगड़कर, के.एन.वांचु व

एन. राजगोपाला अयंगर व पी.एल. वेंकटरामा अय्यर

मकान मालिक व किरायेदार -किराया - अधिकतम किराये के निर्धारण के लिए प्रावधान करने वाला अधिनियम -संवैधानिक वैधता - मानक किराया तय करने वाली अधिसूचना - वैधता - बॉम्बे काश्तकारी व कृषि भूमि अधिनियम 1948 (1948 का बॉम्बे 67), धारा 6 -मैसूर काश्तकारी अधिनियम 1952 (1952 का मैसूर 13), धारा 6 (1) (2), 12 -भारतीय संविधान, अनुच्छेद 14, 19 (1)(एफ), 26, 31, 31ए

मैसूर किरायेदारी अधिनियम 1952 अन्य बाकी के साथ साथ कृषि भूमि के जमींदारों और किरायेदारों के संबंधों को नियंत्रित करने वाले कानून को विनियमित करने के उद्देश्य से अधिनियमित किया गया था। अधिनियम की धारा 6(1) उपबंधित करती है "किसी भी समझौते, प्रथा, डिक्री या न्यायालय या किसी कानून के आदेश के बावजूद किसी भी भूमि के पट्टे के लिए किरायेदार द्वारा किसी भी

अवधि के संबंध में देय अधिकतम किराया ऐसी भूमि पर उगाई गई फसल या फसल का आधा हिस्सा या निर्धारित तरीके से निर्धारित उसका मूल्य, मूल्य से अधिक नहीं होगा।" "सरकार मैसूर राजपत्र में अधिसूचना द्वारा किसी विशेष क्षेत्र में स्थित भूमि के किरायेदार द्वारा देय अधिकतम किराये की कम दर तय कर सकते हैं या अन्य किसी उपयुक्त आधार पर ऐसी दर तय कर सकती है जैसा वो उचित समझें ।" धारा 6(2) द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए मैसूर सरकार ने भूमि का मानक किराया तय करने के लिए एक अधिसूचना जारी की । अनुसूची-1 में निर्दिष्ट जो कि मैदानी क्षेत्रों से संबंधित है उदाहरण स्वरूप समतल की भूमि उपज के एक तिहाई का और अनुसूची-2 में निर्दिष्ट जो मालनाड क्षेत्रों से संबंधित है उदाहरण स्वरूप पहाड़ी क्षेत्रों की भूमि एक चौथाई

अपीलकर्ता जिसके पास मैसूर राज्य के शिमोगा जिले में बगीचे की भूमि थी और जिसने किरायेदार को भूमि पट्टे पर दे दी, ने अधिनियम की धारा 6(2) को चुनौती दी थी और साथ ही साथ अधिसूचना को कि ये भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 19 (1) (एफ), 26, 31 व 31ए का उल्लंघन करती है और किसी भी मामले में अधिसूचना धारा 6(1) जो कि धारा 6(2) जिसे धारा 6(1) का अपवाद बताया गया है सामान्य नियम को नष्ट नहीं कर सकती इसकी अधिसूचना द्वारा ऐसा हो रहा था। मैसूर किरायेदारी अधिनियम को बॉम्बे किरायेदारी अधिनियम और कृषि भूमि अधिनियम 1948 के प्रारूप पर तैयार किया गया था और धारा 6 के

प्रावधान मैसूर एक्ट के बॉम्बे अधिनियम से समान थे। बसंतलाल मगनभाई संजनबाला बनाम बॉम्बे राज्य 1961 सुप्रीम कोर्ट रिपोर्ट 341 में यह निर्धारित किया गया था कि बॉम्बे एक्ट की धारा 6 वैध थी। अपीलार्थी द्वारा यह तर्क दिया गया कि उपरोक्त निर्णय लागू नहीं होता था क्योंकि दोनों अधिनियमों में अंतर था क्योंकि (1) बॉम्बे अधिनियम की प्रस्तावना में यह उल्लेख किया गया था कि यह अन्य बातों के साथ साथ कृषकों की सामाजिक और आर्थिक स्थितियों में सुधार के उद्देश्य से पारित किया गया था और उसका उल्लेख मैसूर अधिनियम में नहीं था। 2. मैसूर अधिनियम के विपरीत बॉम्बे अधिनियम सिंचित व असिंचित भूमि में अंतर किया। 3. बॉम्बे अधिनियम द्वारा जहां अधिकतम के बारे में विहित किया गया है वहीं न्यूनतम के बारे में भी विहित करने में सावधानी बरती गयी है और मैसूर अधिनियम में बाद वाले प्रावधान में इसकी अनुपस्थिति तात्विक अंतर पैदा करती है।

निर्णित किया गया कि (1). मैसूर किरायेदारी अधिनियम 1952 काफी हद तक बॉम्बे किरायेदारी और कृषि भूमि अधिनियम 1948 के समान था और यह प्रश्न कि क्या मैसूर अधिनियम की धारा 6(2) वैध थी बसंतलाल, मगनभाई संजनबाला बनाम बॉम्बे राज्य 1961 एससीआर 341 में दिये गये निर्णय से आवृत्त होता है। तदनुसार मैसूर किरायेदारी अधिनियम वैध था।

2. इसके वास्तविक निर्वचन पर, धारा 6(1) मैसूर किरायेदारी अधिनियम 1952 का उद्देश्य सभी कृषि पट्टों के संबंध में धारा 6(2) के तहत अधिसूचना जारी होने तक उन क्षेत्रों की भूमि पर जहां कि पट्टेशुदा भूमि स्थित है था। धारा 6(2) इसलिए धारा 6(1) का अपवाद नहीं समझी जा सकती। परिणामतः विवादित अधिसूचना वैध है।

मैकबैथ बनाम ऐश्ले, (1874) एल.आर. 2 एससी. अपील 352, विचार किया गया और अप्रयोज्य निर्धारित किया।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील संख्या 1960 का 537

1955 की रिट याचिका संख्या 229 में मैसूर उच्च न्यायालय के 23 दिसंबर 1959 के फैसले और आदेश के खिलाफ अपील

एस.एस. शुक्ला व ई. उदयराथनम, अपीलार्थी की ओर से

एच.एन. सान्याल, भारत के अतिरिक्त सोलिसीटर-जनरल, आर. गोपालकृष्णम व पी.डी. मेनन, प्रत्यर्थी संख्या 1 व 2 की ओर से

आर. गोपालकृष्णम, प्रत्यर्थी संख्या 3 की ओर से

माननीय न्यायाधिपति गजेन्द्रगड़कर द्वारा दिनांक 18 अप्रैल 1962 को निर्णय पारित किया गया।

यह अपील मैसूर उच्च न्यायालय में अपीलकर्ता रघुतिलका तीर्थ श्रीपदंगलवरू स्वामीजी द्वारा दायर एक रिट याचिका से उद्भूत हुई है जिसमें मैसूर किरायेदारी अधिनियम 1952 (1952 का xiii) की धारा 6 (2) की

वैधता को चुनौती दी गयी जिसे उसके बाद अधिनियम कहा जाएगा और 31.03.1952 को उक्त धारा के तहत अधिसूचना जारी की गयी।

उच्च न्यायालय के समक्ष अपनी रिट याचिका में अपीलकर्ता का मामला यह था कि आक्षेपित धारा और साथ ही इसके तहत जारी अधिसूचना संविधान के अनुच्छेद 14, 19 (1)(एफ) 26, 31 व 31 ए के तहत गारंटीकृत उसके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करती है। उक्त तर्क को उच्च न्यायालय के द्वारा खारिज कर दिया गया है और यह माना गया है कि आक्षेपित धारा और अधिसूचना वैध और संवैधानिक है। उसके बाद अपीलकर्ता द्वारा संविधान के अनुच्छेद 132 व 133 के तहत उच्च न्यायालय से प्रमाण पत्र प्राप्त करने के लिए आवेदन किया। उच्च न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 133 के तहत प्रमाण पत्र प्रदान किया लेकिन अनुच्छेद 132 के तहत मामले को प्रमाणित करने से इन्कार कर दिया। उसके बाद अपीलार्थी द्वारा इस न्यायालय में संविधान के निर्वचन के बारे में प्रश्न उठाने की स्वतंत्रता के लिए इस न्यायालय में आवेदन किया और तदनुसार अपीलकर्ता को अनुमति दी गयी। इस प्रकार वर्तमान अपील इस न्यायालय में आयी है।

अपीलकर्ता के पास शिमोगा जिले के ताल्लुका तीर्थल्ली के गांव मुलबागिली में 6 एकड़ और 30 घुंटा उद्यान भूमि है। प्रत्यर्थी संख्या 3 रामप्पा गौड़ा इस भूमि के संदर्भ में उनके किरायेदार है। एक रजिस्ट्रीकृत पट्टा विलेख 11.03.1943 को प्रत्यर्थी संख्या 3 के पक्ष में अपीलार्थी द्वारा

निष्पादित किया गया है। इस दस्तावेज के तहत प्रतिवादी नं. 03 ने रुपयों के अलावा 82 1/2 मन सुपारी का भुगतान 17/12 रुपये प्रतिवर्ष किराये के अतिरिक्त देने का वचन दिया। 1955 में प्रत्यर्थी संख्या 3 ने अधिनियम की धारा 12 के तहत प्रत्यर्थी संख्या 2 तीर्थल्ली के तहसीलदार के समक्ष एक आवेदन दायर किया जिसमें निवेदन किया कि उसके द्वारा अपीलकर्ता को देय मानक किराया तय किया जाना चाहिए। (किरायेदारी मामला 85, 1955-56) इसी बीच प्रत्यर्थी संख्या 1 मैसूर सरकार द्वारा अधिनियम की धारा 6 में प्रदत्त शक्तियों के तहत एक अधिसूचना नंबर R9.10720/L.S.73-54-2 जारी की गयी। इस अधिसूचना का उद्देश्य उस श्रेणी की भूमि के लिए मानक किराया तय करना था जिसमें अपीलकर्ता की भूमि उपज के एक तिहाई हिस्से पर होती है। उक्त अधिसूचना से व्यथित होकर अपीलकर्ता ने 16.12.1955 को उच्च न्यायालय में रिट याचिका दायर की। उसका मामला यह था कि धारा 6(2) और उसके तहत जारी अधिसूचना अधिकारातीत अवैध व प्रवर्तन योग्य नहीं थी।

अपीलकर्ता की ओर से श्री शुक्ला द्वारा हमारे समक्ष उठाये गये तर्कों से निपटने से पहले अधिनियम की योजना पर संक्षेपतः विचार करना आवश्यक होगा। यह अधिनियम मैसूर विधायिका द्वारा जमींदार व काश्तकार जो कृषि भूमि से सम्बद्ध है, के संबंधों को विनियमित करने के लिए आवश्यक समझा जाने पर पारित किया गया है व विनियमन व प्रतिबंधन के आरोपण के लिए जो कि कृषि भूमि निवास स्थान, स्थलों

और उससे जुड़ी भूमि जो कि कृषकों द्वारा मैसूर राज्य में बेलारी जिले के अतिरिक्त धारित की गयी थी व अधिनियम में प्रकट होने वाले कुछ अन्य उद्देश्यों के लिए उपबंध बनाने के लिए अधिनियमित किया गया जो कि अधिनियम की उद्देशिका में सम्मिलित है। इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि अधिनियम का प्राथमिक उद्देश्य कृषि किरायेदारों को उनकी जमींदारों के साथ संबंधों को विनियमित करके आवश्यक राहत प्रदान करना है और इस संबंध में यह अधिनियम बॉम्बे किरायेदारी और कृषि भूमि अधिनियम 1948 का LXVII के साथ करीबी समानता रखता है। वास्तव में, अधिनियम के जिन भौतिक प्रावधानों से हमारा संबद्ध है यह काफी हद तक समान है।

अधिनियम का अध्याय 1 में अधिनियम में प्रयुक्त प्रासंगिक शब्दों को परिभाषित करने के प्रारंभिक विषय से संबंधित है। अध्याय 2 में किरायेदारी के संबंध में सामान्य प्रावधान है धारा 4 उन व्यक्तियों को परिभाषित करती है जिन्हें किरायेदार माना जाता है। धारा 5 उपबंध करती है कि कोई भी किरायेदारी पांच वर्ष से कम की नहीं होगी। धारा 6 किरायेदारों द्वारा देय अधिकतम किराये से संबंधित है। धारा 8 वर्ग (i व ii) में बताये गये तरीके से वस्तु के रूप में देय किराये की गणना का प्रावधान करती है और मकान मालिक को किसी अन्य तरीके से गणना किये गये किराये की वसूली या प्राप्त करने से रोकती है। धारा 9 में सेवा या श्रम के संदर्भ में किराया प्राप्त करना निषिद्ध है। धारा 11 सभी मुकदमों को खत्म करती है। धारा 10 किरायेदारों को उस किराये की वापसी का दावा करने में

सक्षम बनाता है जो अधिनिमय के प्रावधानों के उल्लंघन में वसूल किया गया है। धारा 12 उचित किराये के संदर्भ में पूछताछ से संबंधित है। धारा 12 की उपधारा (3) में पांच कारक बताये गये हैं जिन्हें उचित किराये के निर्धारण के लिये आवेदन से निपटने वाले प्राधिकारी को ध्यान में रखना होगा। धारा 13 धारा 12 की संपाशर्विक है। और धारा 12 के तहत उचित किराया निर्धारित होने के बाद किराये में कमी को अधिकृत करता है। धारा 14 किराये के निलंबन व माफी से संबंधित है। धारा 15 किरायेदारी को समाप्त करने का प्रावधान करती है। धारा 18 के तहत निवास गृह से बेदखल करने के खिलाफ वैधानिक रोक है और धारा 19 किरायेदार के पास पहला विकल्प उस स्थान को खरीदने का जिस पर उसने आवासगृह बनाया है का उपबंध करती है। इसी प्रकार धारा 22 में किरायेदार को पट्टे पर दी गयी भूमि को क्रय करने का अवसर दिया जाता है। धारा 24 उन मामलों से संबंधित है जहां किरायेदारी समाप्ति के संदर्भ में राहत प्रदान की जा सकती है। धारा 25 उन स्थितियों में राहत प्रदान करता है जहां कि किराया ना देने पर किरायेदारी को खत्म कर दिया गया हो। धारा 30 किराया वसूली की प्रक्रिया का प्रावधान करती है। धारा 31 अन्य किसी अधिनियम के तहत किरायेदार के अधिकार को संरक्षित करती है। अध्याय 3 अमलदार के प्रक्रिया और क्षेत्राधिकार से संबंधित है और अमलदार के निर्णयों के विरूद्ध अपील का प्रावधान करता है। अध्याय 4 अपराधों से संबंधित है और उनके लिए दंड निर्धारित करता है। अध्याय पांच में विविध

उपबंध किये गये हैं। इस प्रकार यह व्यापक रूप रेखा में कृषि किरायेदारों को राहत देने के लिए प्रावधान करता है।

वर्तमान अपील में धारा 6 जिससे हमारा सीधा संबंध है इस प्रकार हैः-

"6(1) किसी न्यायालय या किसी कानून के किसी समझौते, प्रथा, डिक्री या आदेश के बावजूद किसी भी भूमि के पट्टे के लिए किरायेदार द्वारा इस अधिनियम के लागू होने की तारीख के बाद किसी भी अवधि के संबंध में देय अधिकतम किराया ऐसी भूमि पर उगायी गयी फसल या उपज के आधे से अधिक नहीं होगा।

बशर्ते कि जहां किरायेदार भूमि पर खेती नहीं करता हो तो देय किराया अमलदार द्वारा तय किया जाने वाला उचित किराया होगा।

(2) सरकार मैसूर राजपत्र में अधिसूचना द्वारा किसी विशेष क्षेत्र में स्थित भूमि के किरायेदारों द्वारा देय अधिकतम किराये की कम दर तय कर सकती है या किसी अन्य उपयुक्त आधार पर ऐसी दर तय कर सकती है जैसी वह उचित समझे।"

जैसा कि पहले ही दर्शाया गया है कि धारा 6 के उपखंड के प्रावधान बॉम्बे अधिनियम की धारा 6(1) व 6(2) के समान हैं। वास्तव में यह कहना सही होगा कि जिस अधिनियम से हमारा संबंध है वह बॉम्बे अधिनियम की तर्ज पर बनाया गया है और इसके अधिकांश महत्वपूर्ण प्रावधानों को अपनाया गया है। बॉम्बे अधिनियम की धारा 6 की वैधता को

इस न्यायालय के समक्ष बसंतल मगनभाई संजनवाला बनाम बॉम्बे राज्य में चुनौती दी गयी थी और यह निर्धारित किया गया था कि उपधारा वैध है। इस न्यायालय द्वारा धारा 6 बॉम्बे अधिनियम की वैधता को बरकरार रखने में दिये गये कारण समान बल के साथ लागू होते हैं। इसलिए मैसूर अधिनियम की धारा 6 की वैधता को चुनौती देने में उठाया गया बिंदु वास्तव में इस न्यायालय के पहले के फैसले द्वारा कवर किया गया है।

हालांकि श्री शुक्ला का तर्क है कि अधिनियम की प्रस्तावना बॉम्बे अधिनियम की प्रस्तावना से भिन्न है। क्योंकि बाद की प्रस्तावना उस तथ्य को संदर्भित करती है कि अधिनियम अन्य बातों के साथ साथ किसानों की आर्थिक व सामाजिक स्थितियों में सुधारों के उद्देश्य से पारित किया गया था और कृषि के लिए भूमि का पूर्ण और कुशल उपयोग सुनिश्चित करना और सामाजिक न्याय के विचार जिस पर बॉम्बे अधिनियम के संबंधित प्रावधान की वैधता को कायम रखने की मांग की गयी थी को वर्तमान अपील से निपटने में लागू नहीं किया जा सकता है। हम इस तर्क से सहमत नहीं हैं। यह सही है कि अधिनियम की प्रस्तावना केवल यह कहती है कि अधिनियम पारित किया गया था जो कि जमीदारों और कृषिभूमि के किरायेदारों को संबंधों को नियंत्रित करता है और यह सामाजिक न्याय की आवश्यकता का उल्लेख नहीं करता है। कृषि के लिए भूमि का पूर्ण और कुशल उपयोग का विशेष रूप से उल्लेख नहीं करता है लेकिन एक कृषि सुधार को प्रभावी करने के उद्देश्य से पारित किये गये कानून से उसके

भौतिक प्रावधानों के आवश्यक आधार से केवल इस आधार पर नजरअंदाज करना सही नहीं होगा कि सामाजिक न्याय की अवधारणा जिस पर उक्त प्रावधान आधारित है का उल्लेख नहीं किया गया है। हमने पहले ही अधिनियम की व्यापक योजना की संक्षेप में जांच कर ली है और यह स्पष्ट है कि अधिनियम के महत्वपूर्ण प्रावधान का उद्देश्य कृषि किरायेदारों की आर्थिक और सामाजिक स्थितियों में सुधार करना है और इसलिए हम यह नहीं सोचते कि प्रस्तावना में सामाजिक न्याय का उल्लेख नहीं होना अधिनियम की धारा 6 को बॉम्बे अधिनियम के संबंधित धारा से विभेद करता हो।

यह आग्रह किया जाता है कि मैसूर अधिनियम के विपरीत बॉम्बे अधिनियम सिंचित व असिंचित भूमि के बीच अंतर करता है और धारा 6 (1) के द्वारा यह प्रावधान किया गया है कि सिंचित भूमि के मामले में देय अधिकतम लगान एक चौथाई से अधिक नहीं होगा और अन्य भूमि के मामलों में ऐसी भूमि की फसल के एक तिहाई या निर्धारित तरीके से निर्धारित मूल्य से अधिक नहीं होगा। यह सही है कि अधिनियम की धारा 6 (1) सिंचित व असिंचित भूमि के बीच कोई अंतर नहीं करती है लेकिन हमारी राय में यह अत्यधिक महत्व का बिन्दु नहीं है। जिस प्रकार धारा 6 (1) बॉम्बे अधिनियम की धारा 6 (1) का उद्देश्य एक अधिकतम सीमा प्रदान करना है जिसके आगे कृषि लगान को बढ़ाने की अनुमति नहीं दी जायेगी और जहां तक लगान की अधिकतम सीमा के निर्धारण का संबंध है

यह आवश्यक नहीं है कि सिंचित व असिंचित भूमि के बीच सभी भेद आवश्यक रूप से किये जायें। यह आवश्यक रूप से ध्यान में रखना चाहिए कि धारा अधिकतम के बारे में उपबंध करती है। धारा का उद्देश्य अधिकतम निर्धारित करना है ना कि न्यूनतम प्रदान करना। अधिकतम सीमा निर्धारित करने में यह विधायिका के लिए खुला हो सकता है कि वह ऐसी अधिकतम सीमा प्रदान करे जो सभी भूमि के लिए सामान्य हो चाहे वह सिंचित हो या नहीं। इसलिए हम इस बात को महत्व देने के इच्छुक नहीं है कि भूमियों के वर्गीकरण के अभाव में जबकि अधिकतम निर्धारण किया जाये। धारा 6 (1) किसी अयोग्यता से ग्रस्त है।

फिर यह तर्क दिया गया है कि बॉम्बे अधिनियम अधिकतम निर्धारित करते समय न्यूनतम निर्धारित करने की भी सावधानी बरती है और बाद वाले प्रावधान के अनुपस्थिति से एक महत्वपूर्ण अंतर आ जाता है यह तर्क स्पष्ट रूप से गलत है। यह सही है कि बॉम्बे अधिनियम की धारा 8 जिसे कि बॉम्बे अधिनियम की धारा 1956 में शामिल किया गया है। अधिकतम व न्यूनतम किराये के बारे में प्रावधान करती थी लेकिन जैसा कि इस न्यायालय में संजनबाला के मामले में हुए फैसले से दर्षित होता है कि उक्त प्रावधान की वैधता को बरकरार रखा गया है तथा न्यूनतम किराये के निर्धारण पर कोई निर्भरता नहीं रहती है। वास्तव में न्यूनतम किराया उच्च न्यायालय के फैसले के बाद तय किया गया था जो कि इस न्यायालय के समक्ष अपील के अधीन था और यह तथ्य कि

न्यूनतम किराया बाद में निर्धारित किया गया था फैसले में केवल संयोगवश उल्लेख किया गया है इसलिए न्यूनतम किराया तय करने वाले प्रावधान की अनुपस्थिति विवादित प्रावधान में कोई दुर्बलता नहीं लाती है। इसलिए हम बात से संतुष्ट हैं कि विवादित धारा बॉम्बे अधिनियम की धारा 6 के काफी हद तक समान हैं। जिसके साथ यह न्यायालय संजनबाला मामले में संबंधित था और वर्तमान अपील में धारा की वैधता की चुनौती को उक्त निर्णय के अंतर्गत शामिल माना जाना चाहिए।

यह हमें इस प्रश्न पर ले जाता है कि क्या विवादित अधिसूचना अवैध है। यह अधिसूचना राज्य सरकार को धारा 6 (2) के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए जारी की गयी है और यह प्रावधान करता है कि अधिसूचना की अनुसूची 1 व अनुसूची 2 में निर्दिष्ट क्षेत्रों में स्थित भूमि के किरायेदारों द्वारा देय अधिकतम किराये की दर क्रमशः फसल या उगाही हुई फसलों का एक तिहाई और एक चौथाई होगी जो कि 01 अप्रैल 1955 से प्रभावी होगी। अनुसूची 1 मैदानी क्षेत्रों से संबंधित है जिसमें अधिकतम किराया या लगान फसल या फसलों का एक तिहाई होगा और अनुसूची 2 मालनाड क्षेत्रों से संबंधित है जिनमें कि किराये की अधिकतम दर फसल या उगाई हुई फसल का एक चौथाई होगा।

ऐसा प्रतीत होता है कि मैदानी भूमि और मालनाड भूमि का वर्गीकरण मैसूर में सर्वविदित है। मैदानी भूमि वह भूमि है जो समतल में है जबकि मालनाड भूमि पहाड़ों इलाकों की भूमि है। दोनों श्रेणी की भूमियों

में वर्गीकरण विभिन्न वर्षा की परिस्थितियों खेती की विभिन्न प्रकृति रहने की विभिन्न स्थितियां, श्रमिकों की उपलब्धता, उपज की मात्रा व गुणवत्ता में अंतर को ध्यान में रखते हुए है। यह सही है कि अधिसूचना जिले दर जिले के अर्थ में क्षेत्र के हिसाब से अधिकतम किराये की निचली दर निर्धारित नहीं करती है लेकिन इसका उद्देश्य पूरे राज्य में भूमि को दो तरह से वर्गीकृत करके उक्त अधिकतम दर मैदान व मालनाड भूमि के संदर्भ में निर्धारित करना है।

श्री शुक्ला द्वारा कहा गया है कि आक्षेपित अधिसूचना अवैध है क्योंकि यह धारा 6 (1) के प्रावधानों से असंगत है। यह कहा गया है कि धारा 6 (1) एक सामान्य नियम प्रतिपादित करती है जबकि धारा 6 (2) सामान्य नियम का अपवाद है। इसी अपवाद को सामान्य नियम को निगलने की अनुमति नहीं दी जा सकती और अधिसूचना बिलकुल यही करने का इरादा रखती है। यह तर्क हाउस आॅफ लाॅर्ड के मैकबैथ बनाम एश्ले के निर्णय पर आधारित है। यह देखा जाएगा कि यह तर्क धारा 6 के दो उपखंडों के निर्माण के बारे में सवाल उठाता है । हालांकि उस प्रश्न पर विचार करने से पहले हम हाउस आॅफ लाॅर्ड के निर्णय का उल्लेख कर सकते हैं जिस पर उक्त तर्क आधारित है।

यह सामने आता है कि स्काॅटलैण्ड में सार्वजनिक घरों को बंद करने के लिए रात के ग्यारह बजे का समय नियत किया गया था। हालांकि विशिष्ट मामलों में और सुविचारित कारणों पर उक्त से विचलन किसी

विशिष्ट इलाके जिसे कि इसकी आवश्यकता थी की अनुमति दी गयी थी। रौथसे के मजिस्ट्रेट ने ग्यारह बजे के बजाय दस बजे बंद करने का आदेश दिया था और आदेश का प्रभाव यह हुआ कि इसने वर्ग के प्रत्येक सार्वजनिक घर को अपनी चपेट में ले लिया। हाउस आॅफ लार्डस ने यह निर्धारित किया कि मजिस्ट्रेट का आदेश अधिकारातीत था। वैधानिक उपबंध जिससे कि हाउस आॅफ लार्डस का संबंध था वह संसद के अधिनियम के 25 व 26 विक्ट.सी. 35 में विहित था। इन प्रावधानों के परिणामस्वरूप सार्वजनिक घरों को बंद करने के लिए रात के ग्यारह बजे का समय नियत किया गया। हालांकि इस प्रावधान जिसमें अन्य बातों के साथ साथ यह कहा गया था कि किसी विशेष इलाके में सराय, होटल और सार्वजनिक घरों को खोलने व बंद करने के लिए न्यायाधीशों और मजिस्ट्रेटों के लिए ऐसे अन्य घंटों को अनुसूची में शामिल करना वैध होगा खोलने के लिए सुबह छह बजे से पहले या आठ बजे के बाद या बंद करने के लिए शाम को नौ बजे से पहले या ग्यारह बजे के बाद जैसे वह उचित समझें। यह उक्त परंतुक के द्वारा उन्हें प्रदत्त अधिकार के अनुसरण में है जिसके तहत रोत्से के मजिस्ट्रेट ने बुर्ज के प्रत्येक सार्वजनिक घर को शामिल किया जिसके द्वारा वैधानिक रूप से नियत किये गये समय से विचलन प्रभावी हुआ था।

मजिस्ट्रेट द्वारा जारी आदेश की वैधता से निपटते हुए लाॅर्ड चांसलर लाॅर्ड केयर्न्स ने अपनी राय व्यक्त की कि यदि अपवाद यदि नियम को खत्म करता है तो यह निश्चित रूप से एक अपवाद नहीं रह जाता है और

संसद के अधिनियम में उल्लेखित विवेक का प्रयोग शेष नहीं रह जाता है। यही कारण था कि मजिस्ट्रेट के आदेश को अधिकारातीत घोषित किया गया। यह माना गया कि मजिस्ट्रेट के पास विवेकाधिकार था लेकिन लाॅर्ड चांसलर ने देखा कि ''विवेक प्रदान करना'' शब्द स्पष्ट रूप से एक विशेष इलाके के संदर्भ में है ना कि पूरे बुर्ज के संदर्भ में। पूरे बुर्ज के बारे में जो सच होना चाहिए उसे शाही संसद के विचार के लिए आरक्षित और निर्धारित मामले के रूप में माना गया था। लाॅर्ड चांसलर ने इस प्रश्न पर कोई राय व्यक्त नहीं कि क्या मजिस्ट्रेटों में विहित विवेक का प्रयोग एक बार से अधिक प्रयोग किये हैं लेकिन उस बिंदु पर निर्णय लिये बिना उन्होंने कहा कि मजिस्ट्रेटों का आदेश वास्तव में संसद के अधिनियम से बचने के बराबर है। वस्तुतः मजिस्ट्रेटों ने संसद के अधिनियम द्वारा निर्धारित नियम को बदलने के लिए अपने जिले के सभी सार्वजनिक घरों के संदर्भ में प्रयास किया था। लाॅर्ड केयर्न्स को लाॅर्ड चान्सलर द्वारा व्यक्त की गयी राय से सहमत थे ने अपने निष्कर्ष को इस आधार पर रखा कि यह कहना असंभव है कि मजिस्ट्रेटों ने जो सीमाएं परिभाषित की थी उन्हें बुर्ज के भीतर एक विशेष इलाका कहा जा सकता है और इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि मजिस्ट्रेटों द्वारा जो किया गया वह संसद के अधिनियम से बचने का एक प्रयास जैसा था। लाॅर्ड सेलबोर्न के अनुसार प्रतिभागी ''आवश्यकता'' मूल ''स्थान'' से जुड़ा हुआ है और इससे पहले यह स्थान की विशेष परिस्थितियों से उत्पन्न होने वाली आवश्यकता होनी चाहिए। यही कारण है कि लाॅर्ड सेलबोर्न ने सोचा कि मजिस्ट्रेटों को एक ईमानदार और

प्रमाणिक निर्णय के अभ्यास में यह राय रखनी चाहिए कि वे जिस विशेष इलाके को सामान्य नियम से छोड़कर अलग करते हैं वह उनकी विशेष परिस्थितियों से यह मांग करता है कि उनमें अंतर की आवश्यकता है।

इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि यद्यपि निर्णय का सामान्य आधार जैसा कि लाॅर्ड केयर्न्स द्वारा व्यक्त किया गया है ऐसा प्रतीत होता है कि अपवाद सामान्य नियम को नष्ट नहीं कर सकता एक कारण जिसमें अंततः निर्णय को प्रभावित किया था वह विवेकाधिकार किसी विशेष इलाके के संदर्भ में सद्भावना और उचित विचार विमर्श के बाद प्रयोग किया जाना चाहिए। जिस तरीके से आदेश जारी किया गया था उससे संकेत मिलता है कि विशेष इलाकों की आवश्यकताओं की मजिस्ट्रेटों द्वारा विधिवत जांच नहीं की गयी थी। यह महत्वपूर्ण है कि हालांकि लार्ड केयर्न्स ने इस प्रश्न पर कि क्या विवेकाधिकार का एक से अधिक बार प्रयोग किया जा सकता है मौन रखा। उन्होंने इसका उत्तर देना उचित नहीं समझा। लेकिन उनके भाषणों के दौरान लाॅर्ड द्वारा व्यक्त की गयी राय की प्रकृति से प्रतीत होता है कि विवेकाधिकार का प्रयोग एक से अधिक बार नहीं किया जा सकता है और किसी मामले में उसका उपयोग विशेष इलाके के विशेष संदर्भ में जैसा कि परंतुक द्वारा दर्शाया गया है, किया जाना चाहिए। यदि पूरे बुर्ज के संदर्भ में कोई आदेश दिया गया है तो यह नहीं कहा जा सकता कि उसे प्रत्येक विशेष इलाके के आवश्यकताओं के संदर्भ में उचित विवेक का प्रयोग करने के बाद पारित किया गया है। सम्मान के साथ यह भी स्पष्ट किया जाता है

कि यदि मजिस्ट्रेटों पर विशेष इलाकों के संदर्भ में सामान्य प्रावधान द्वारा निर्धारित नियम से विचलन करने का विवेकाधिकार दिया जाता है यह देखना सरल नहीं होगा कि उक्त विवेकाधिकार का एक से अधिक बार उपयोग क्यों नहीं किया जा सकता है। वास्तव में ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो सकती हैं जब मजिस्ट्रेटों को समय समय पर विभिन्न इलाकों के संबंध में विचार करना पड़ सकता है और यदि विभिन्न इलाकों के मामलों पर विचार करते हुए मजिस्ट्रेटों को यह प्रतीत होता है कि उनमें से प्रत्येक के संबंध में सामान्य नियम से विचलन किया जाना चाहिए इसका पालन करना आसान नहीं है कि क्यों परंतुक विभिन्न आदेशों को जो कि मजिस्ट्रेट द्वारा अलग अलग लेकिन विशेष इलाकों के लिए पारित किये जा रहे हैं आदेशों को उचित नहीं ठहराता है। दूसरी तरफ यदि मुख्य प्रावधान का अर्थ यह लगाया जाता है कि इसके द्वारा निर्धारित समय पर आमतौर पर केवल परंतुक द्वारा निर्धारित कुछ अपवादों के साथ लागू होना था तो वह अलग मामला होगा। हालांकि हमारे लिए यह आवश्यक नहीं है कि इस बिंदु को आगे बढ़ाएं और सामान्य प्रस्ताव पर एक निश्चित राय व्यक्त करना आवश्यक नहीं है कि एक सामान्य नियम को एक अपवाद खत्म नहीं कर सकता। इस नियम को धारा 6 के प्रावधानों की तरह लागू नहीं किया जा सकता। इस संदर्भ में हालांकि हम मैक्सबेल और क्रेज में, मैकबेथ के निर्णय में जिसे प्राधिकार के रूप में माना गया है जहां कि मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश संसदीय कानून की अवहेलना के समान है क्योंकि यह विहित विवेक का ईमानदार और वास्तविक अभ्यास नहीं था।

(मैक्सबेल कानूनों के निर्वचन पर, 11वां संस्करण पृष्ठ 121 और क्रेज कानूनों के निर्वचन पर 5वां संस्करण पृष्ठ 75)

लेकिन यह मानते हुए कि जिस प्रस्ताव के लिए श्री शुक्ला मैकबैथ के मामले में दिये गये निर्णय में जो कि सुदृढ़ है क्या यह धारा 6 पर पूरी तरह लागू होता है और इस प्रश्न का उत्तर धारा 6 के दो उपखंडों में किये गये प्रावधान के निर्वचन पर आधारित होगा। यह ध्यान दिये जाने योग्य है कि धारा 6(1) अधिकतम सीमा की घोषण करता है जिसके परे जाकर कोई भी मकान मालिक अपने किरायेदार से किराया वसूल नहीं कर सकता। दूसरे शब्दों में जैसे ही अधिनियम परिवर्तन में आया एक सीमा तय कर दी गयी जिसके परे जाकर मकान मलिक अपने किरायेदार से किराया वसूल नहीं कर सकता भले ही यह इकरारनामा, प्रथा, डिक्री या न्यायालय के आदेश या अन्य किसी कानून के आदेश द्वारा उचित हो। इस उपधारा के प्रावधान सभी कृषि पट्टों पर व्यक्तिगत और अलग अलग लागू होते हैं और व्यक्तिगत रूप से मकान मालिक व किरायेदारों के संबंध को किरायेदार द्वारा किराये के भुगतान के संदर्भ में नियंत्रित करते हैं। उपखंड (1) के द्वारा अधिकतम का निर्धारण वास्तव में एक सामान्य नियम प्रतिपादित करने का इरादा नहीं है कि एक मकान मालिक को अपने किरायेदार से क्या वसूल करना चाहिए और यह केवल कुछ अर्थ में है कि उसका संबंध उपखंड (2) के प्रावधानों से निर्णित किया जाना चाहिए। इस संदर्भ में हम इंगित कर सकते हैं कि धारा 6(1) में जो कि किरायेदार के

मामलों से संबंधित है एक परंतुक है जो कि खेती नहीं करते हैं और उनके संदर्भ में यह प्रतिपादित किया गया है कि किराया न्यायोचित होगा और अमलदार द्वारा तय किया जाएगा।

धारा (2) ऐसे शब्दों में लिखी गयी है कि उसे उपधारा (1) का परंतुक नहीं कहा जा सकता। सार में जोड़ते हुए ना तो यह एक परंतुक है और ना ही उपधारा (1) का अपवाद है। अधिकतम निर्धारण करने के बाद जिसके बाद कृषि किराया कम नहीं हो सकता है। धारा 6(1) द्वारा विधायिका ने सरकार को एक न्यूनतम दर अधिकतम किराये की विशेष क्षेत्र में स्थित भूमि के संदर्भ में तय करने की अनुमति दी है। सरकार को उचित समझे जाने वाली किसी अन्य उपयुक्त आधार पर किराये का भुगतान तय करने के लिए भी अधिकृत किया गया है। दूसरे शब्दों में सरकार को दिया गया अधिकार या तो कम दर तय करने का है या कोई अन्य आधार तय करने का है जिस पर किराया तय किया जा सके। प्रावधान एक स्वतंत्र प्रावधान है और इसलिए दोनों उप धाराओं को अलग अलग, स्वतंत्र, हालांकि समन्वित प्रावधान के रूप में पढ़ा जाना चाहिए। यह सोचना गलत होगा कि उपधारा (2) उपधारा (1) का परंतुक या अपवाद है जहां कि उपधारा (1) सभी पट्टों से व्यक्तिगत रूप से निपटता है और इस संबंध में एक सीमा निर्धारित करता है। उपधारा (2) राज्य के विभिन्न क्षेत्रों के संबंध में अधिकतम निर्धारित करने का इरादा है। दोनों ही प्रावधानों का उद्देश्य निःसंदेह समरूप है लेकिन समान नहीं है और उनके

बीच संबंध को वैध रूप से सामान्य नियम और उसके परंतुक या अपवाद के बीच के संबंध के रूप में नहीं माना जा सकता है।

यह तर्क कि अधिसूचना जारी करके सरकार ने धारा 6(1) में संशोधन करने का इरादा किया है। हमारी राय में सुस्थापित नहीं है। जैसा कि हम पहले देख चुके हैं कि धारा 6(1) का उद्देश्य सभी कृषि पट्टों पर अधिसूचना जारी होने तक धारा 6(2) उन क्षेत्रों के संदर्भ में जहां कि पट्टेशुदा भूमि स्थित है लागू होने का है। ऐसा सुझाव नहीं दिया जाता है कि धारा 6(2) के तहत यह आवश्यक है कि सरकार अलग अलग भूमि के संदर्भ में न्यूनतम दरें तय करें और इसलिए उसमें कोई संदेह नहीं हो सकता कि अपीलार्थी के तर्क के बाद भी सरकार न्यूनतम किराया दर जिलेवार निर्धारित करने में सक्षम होंगी। यदि न्यूनतम दर जिलेवार निर्धारित करने की बजाय भूमि को दो श्रेणियों में वर्गीकृत करने के बाद जो कि अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त है तथा उक्त श्रेणी की भूमि के लिए संपूर्ण राज्य में संदर्भ दरें निर्धारित करती है हम यह नहीं देख पाते हैं कि उक्त अधिसूचना किस प्रकार धारा 6(1) या धारा 6(2) के असंगत है। धारा 6 की योजना यह निर्धारित करती हुई प्रतीत नहीं होती है कि धारा 6(2) में अधिसूचना जारी होने के बाद कुछ क्षेत्र आवश्यक रूप से धारा 6(1) से आबद्ध होने के लिए छोड़ दिये जाएंगे। इस तरह की अवधारण उक्त प्रावधानों में अंतर्निहित उद्देश्यों से असंगत होगी। क्या धारा 6(1) में क्षेत्रों से अलग और उनसे संबंधित विशेष कारकों पर विचार किये बिना एक

सामान्य सीमा तय की है। इस प्रकार यह तय किया गया है कि एक सामान्य सीमा विधायिका द्वारा महसूस की गयी कि सीमा को क्षेत्र से क्षेत्र बदला जाना सही है और इसलिए सरकार को न्यूनतम दर तय करने की शक्ति प्रदान की गयी है। सरकार इस मामले की जांच करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंची कि कृषि भूमि को जो सुस्थापित श्रेणियों में विभाजित करना और उनके संदर्भ में सीमा तय करना न्यायसंगत और उचित होगा। विधायिका द्वारा उपरोक्त परिस्थितियों में यह अनुमान लगाया गया होगा कि धारा 6(2) में शक्तियों का प्रयोग करते समय राज्य के सभी क्षेत्रों को शामिल किया जा सकता है और सामान्य सीमा जो कि धारा 6(1) में है वो ऐसी भूमि जो अधिसूचना से आवृत्त है पर लागू नहीं होगी। यदि धारा 6(1) सामान्य नियम नहीं है और धारा 6(2) उसका अपवाद नहीं है आक्षेपित अधिसूचना को सामान्य नियम को नष्ट करने वाला नहीं कहा जा सकता। सारतः यही वह दृष्टिकोण है जो मैसूर उच्च न्यायालय ने इस मामले में लिया है और हम सोचते हैं कि परिणामस्वरूप अपील विफल होती है और खर्चे के साथ खारिज की जाती है।

याचिका खारिज की गयी।